Postal Regn. - RTK/010/2020-22
RNI - HRHIN/2003/10425

ओ३म्

आर्य प्रतिनिधि

आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा का पाक्षिक मुखपत्र

अक्तूबर 2024 (प्रथम)

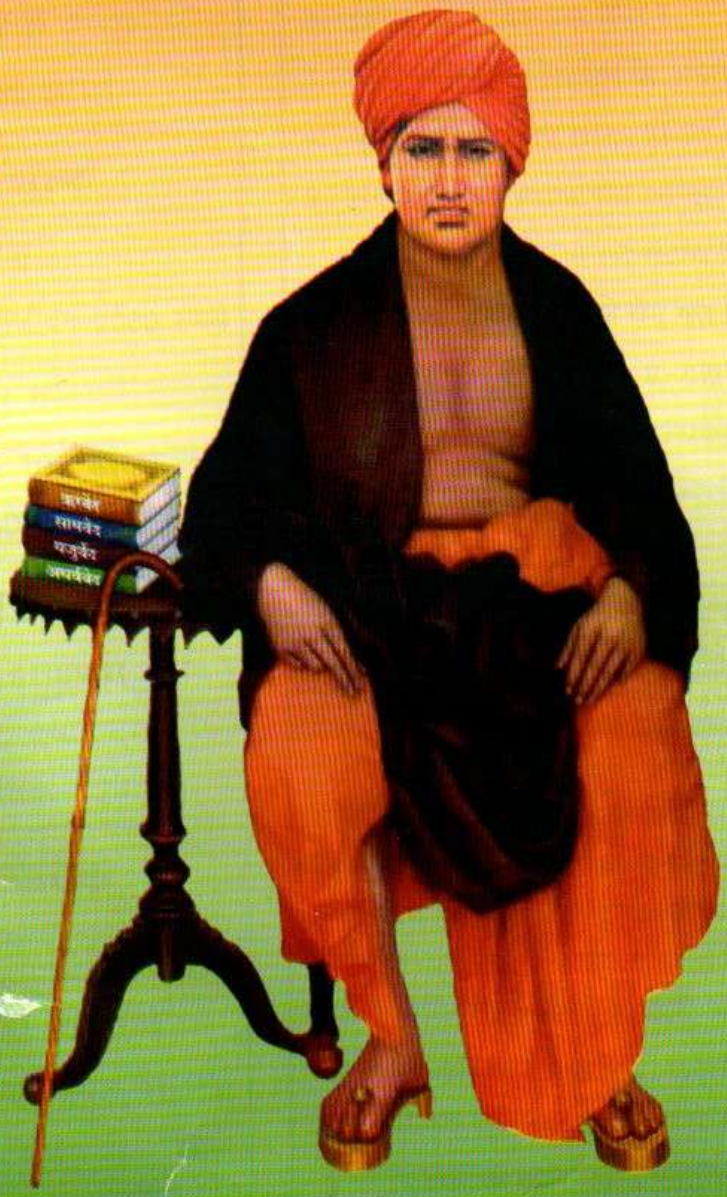

Email : aryapsharyana@yahoo.in

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

Visit us : www.apsharyana.org

सृष्टि संवत् 1,96,08,53,125
विक्रम संवत् 2081
दयानन्दाब्द 201

आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा
की
मुख-पत्रिका

वर्ष 20 अंक 17

सम्पादक :
उमेद सिंह शर्मा

पत्रिका-शुल्क
देश में
वार्षिक-200 रुपये आजीवन-2000 रुपये
विदेश में
वार्षिक शुल्क 100 डॉलर
आजीवन 400 डॉलर

पत्रिका का स्वामित्व
आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा (रजि०)
सिद्धान्ती भवन, दयानन्दमठ,
गोहाना रोड, रोहतक-124001

सह-सम्पादक
आचार्य सोमदेव

सम्पादकीय विभाग
सिद्धान्ती भवन, दयानन्दमठ, रोहतक
सम्पर्क सूत्र-
चलभाष :-
मो० 89013 87993

॥ ओ३म् ॥

आध्यात्मिक, सामाजिक, राष्ट्रीय चिन्तन एवं वैदिक जीवन मूल्यों की पाक्षिक पत्रिका

आर्य प्रतिनिधि

(अक्तूबर, 2024 प्रथम)
1 से 15 अक्तूबर, 2024 तक

इस अंक में....

1. सम्पादकीय—वेद-प्रवचन 2
2. ईश्वर पर अविश्वास क्यों ? 3
3. स्वास्थ्य चर्चा—लहसुन के अनेक लाभ 4
4. बुद्धिमानों के लिए संसार ही अध्यापक है 5
5. सन् 1857 के स्वाधीनता आन्दोलन के सूत्रधारों में अग्रणी थे महर्षि दयानन्द सरस्वती जी 8
6. कविता—जिस ऋषि ने वेद का प्रचार किया 9
7. हम क्यों हारे ? दास्तान-ए-गद्दारी (7) 10
8. आर्य कौन हैं और इनका मूलस्थान ? 11
9. पितरों का वास्तविक श्राद्ध—जीवितों की सुसेवा 14
10. समाचार-प्रभाग 16

आर्य प्रतिनिधिपाक्षिक पत्रिका के प्रसार में सहयोग दें

'आर्य प्रतिनिधि' पाक्षिक उलट-पलटकर रख देने लायक नहीं, बल्कि गंभीरतापूर्वक पढ़ने योग्य पत्रिका है। यदि आप इसके पाठक बनेंगे तो हमें विश्वास है कि पसन्द भी करेंगे और चाहेंगे कि इसे अन्य लोग भी पढ़ें। कृपया अपने जैसे गम्भीर पाठकों से 'आर्य प्रतिनिधि' पाक्षिक पत्रिका की चर्चा करें, उन्हें इसका ग्राहक बनने के लिए प्रेरित करके ऋषि ऋण से अनृण होवें।

'आर्य प्रतिनिधि' पाक्षिक का वार्षिक शुल्क 200/- रुपये एवं आजीवन शुल्क 2000/- रुपये है।

आप उपरोक्त राशि 'आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा' दयानन्दमठ रोहतक के नाम से बैंक ड्राफ्ट/मनीऑर्डर द्वारा भिजवाकर सदस्य बन सकते हैं। —सम्पादक

सम्पादकीय...

वेद-प्रवचन

❑ संकलन—उमेद शर्मा, मन्त्री आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा, दयानन्दमठ, रोहतक

गतांक से आगे....

परन्तु इस चन्द्रग्रहण का हमारे कर्मों और उनके फलों पर क्या प्रभाव पड़ेगा, यह मनमानी बात है। चन्द्रग्रहण के दिन हिन्दू मेहतर चिल्लाते फिरते हैं कि धर्म करो, धन दो, चांद विपत्ति में है। इस घोर अन्याय के प्रतिकार के लिए लोग व्रत रखते हैं, गंगास्नान करते हैं। मेहतरों को सुझा दिया गया है कि तुम राहु-केतु की सन्तान हो। तुमको दान दिया जाएगा तो हमारी सन्तान की मान्यता के बदले वे चांद को मुक्त कर देंगे। मेहतर भी थोड़े से दान के प्रलोभन में यह स्वीकार कर लेते हैं कि हम असुर की सन्तान ही सही, इसी बहाने कुछ मिल तो जाता है। यह प्रलोभन उनको न तो सत्यासत्य का दर्शन करने देता है न उसका व्याकरण। सत्य पर अश्रद्धा हो जाती है असत्य पर श्रद्धा। सभी धर्मों में जिनमें साम्प्रदायिकता अधिक है यही परम्परा चली आती है। हजरत ईसा भले और त्यागी पुरुष थे, इतना तो ठीक है। परन्तु वे ईश्वर के '**इकलौते**' पुत्र थे, यह तो न भूतकाल में किसी ने देखा न इसको जानने की कसौटी हैं। किसी ने एक कल्पना कर ली और सबने आंखें मींचकर स्वीकार कर लिया। हजरत मोहम्मद साहब बुद्धिमान्, वीर और नीतिज्ञ पुरुष थे और उन्होंने अरब के लोगों की बहुत-सी बुराइयों को दूर किया, इतना सत्य है, परन्तु क्या मोहम्मद साहब ने करामात से चांद के दो टुकड़े भी कर दिये ? यह तो असम्भव बात है। परन्तु जहाँ लोग आधी सभ्यता पर श्रद्धा रखते हैं वहाँ आधी असभ्यता पर भी। लोग दर्शन और व्याकरण से डरने लगते हैं। यदि कोई खगोल शास्त्र का विद्यार्थी मुसलमान यह सोचने लगे कि चाँद के दो टुकड़े कैसे हो गये तो समस्त इस्लाम जगत् उसके ऊपर टूट पड़ेगा कि तू इस्लाम पर श्रद्धा नहीं करता। यही बात संसार भर के गुरुओं से सम्बन्ध रखने वाली बहुत-सी घटनाओं पर लागू होती है। वैदिक ऋषियों 'गृत्समद्' आदि के विषय में बहुत-सी मिथ्या कल्पनाएँ हैं, स्वामी दयानन्द के विषय में भी गढ़नी आरम्भ हो गई हैं। आर्यसमाज को यजुर्वेद के इस मन्त्र को दृष्टि में रखते हुए सावधान होने की जरूरत है कि कहीं अन्धविश्वासी लोग अनृत पर श्रद्धा करना भी न सिखला दें। वेद तो स्पष्ट कहता है कि अश्रद्धा बुरी चीज नहीं है यदि वह 'अनृत' पर की जाए। अनृत या झूठ श्रद्धा के योग्य है ही नहीं, वह अश्रद्धा के ही योग्य है। जो व्यक्ति या जाति बिना विचारे हर बात पर श्रद्धा करती है उसमें अनृत पर अश्रद्धा करने का साहस नहीं रहता और धूर्त लोग अपनी स्वार्थ-सिद्धि के लिए सदा दूध में पानी मिला दिया करते हैं। यदि हम से कोई शिकायत करे कि तुमको अमुक बात पर श्रद्धा नहीं है तो घबराना नहीं चाहिए। उससे कहना चाहिए कि खोटे सिक्के पर श्रद्धा करना मूर्खता है। कोई जान-बूझकर खोटा सिक्का स्वीकार नहीं करता। अनृत में अश्रद्धा करना वेद का उपदेश है। अनृत फैलाने वालों को पूज्य समझना भी वेदों से विरोध करना है। श्रद्धा और अश्रद्धा दोनों धर्म के अङ्ग हैं। धर्मात्मा वही हो सकता है जो सत्य और अनृत का अन्वेषण करके सत्य पर श्रद्धा और असत्य पर अश्रद्धा रक्खे।

आवश्यक सूचना

'आर्य प्रतिनिधि' पाक्षिक के सभी ग्राहकों को सूचित किया जाता है कि जिन ग्राहकों का जो भी बकाया शुल्क बनता है, वह बकाया शुल्क सभा कार्यालय में जमा करें या मनीऑर्डर द्वारा भेजने का कष्ट करें ताकि हम आपकी पत्रिका समय पर भेजते रहें। शुल्क भेजते समय आप ग्राहक संख्या व मोबाइल नंबर अवश्य लिखें।

—रघुवरदत्त, पत्रिका लिपिक, मो० 7206865945

ईश्वर पर अविश्वास क्यों?

❑ संकलन—कन्हैयालाल आर्य, संरक्षक—आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा, रोहतक

गतांक से आगे....

उसने उत्तर दिया, ''गुरुजी, यह शरीर तो माता-पिता के माध्यम से भगवान् ने बनाया है।'' मैंने कहा, ''बच्चे! हमारे बनाये हुए भगवान् के मन्दिर में तू इतनी गन्दी वस्तुएँ मन्दिर के बाहर रखकर जाता है, परन्तु यह शरीर जो भगवान् का स्वयं का बनाया हुआ है उसमें प्रतिदिन गन्दी वस्तुएँ डाल रहा है। कया भगवान् तुमसे प्रसन्न होगा?'' उसने कुछ सोचने पर उत्तर दिया, ''गुरुजी, मैं समझ गया, आज के पश्चात् भगवान् के स्वयं बनाये इस शरीररूपी मन्दिर में गन्दी वस्तुएँ नहीं डालूँगा। अब मैं समय गया कि भगवान् केवल मन्दिर के अन्दर मूर्ति में ही नहीं है, बाहर भी है, ईश्वर सर्वव्यापक है, सर्वज्ञ है, सर्वान्तर्यामी है। मैं आपके सम्मुख संकल्प करता हूँ कि मैं भगवान् की वास्तविक मूर्तियों की सेवा करूँगा। मूर्तिपूजा में फँसकर अपने जीवन को व्यर्थ नहीं गवाऊँगा।''

बन्धुओ! आपको इस दृष्टान्त से पता चल गया होगा कि ईश्वर पर विश्वास न होने का मुख्य कारण मूर्तिपूजा है अत: मनुष्य की बनाई हुई मूर्तियों के स्थान पर परमात्मा की बनाई हुई मूर्तियों की सेवा करनी चाहिए। आपका ईश्वर पर विश्वास दृढ़ बनेगा।

इसके अतिरिक्त परिवारों में ईश्वरभक्ति, सन्ध्या, यज्ञ, स्वाध्याय का अभाव होना, जन्म और मृत्यु के रहस्य को न समझना, अष्टांगयोग के नियमों की जानकारी न होने के कारण उसके अनुकूल आचरण न करना आदि ईश्वर अविश्वास के कारण हैं। अत: हमारा कर्त्तव्य है कि अपने घरों में स्वाध्याय, साधना, सेवा, सत्संग का वातावरण बनायें। हमारे वैदिक विद्वानों का भी कर्त्तव्य है कि वे वैदिक सिद्धान्तों को उनके जीवन व्यवहार में आने वाले दृष्टान्तों को समझायें। ईश्वर के सत्य एवं वास्तविक स्वरूप का बोध करायें। हमारा भी कर्त्तव्य है कि हम अपनी सन्तानों में अच्छे संस्कार दें, तभी उनका ईश्वर पर विश्वास होगा। प्रभु कृपा करें कि हम इस कार्य में सफल हों।

सास बहू की कहानी

(1) सास का बहू को मन्दिर में ले जाना

किसी गुरुकुल में एक ब्रह्मचारिणी शिक्षा ग्रहण करने के पश्चात् एक सम्पन्न परिवार में विवाहित कर दी गई। जहाँ उसका विवाह हुआ वह एक पौराणिक परिवार था। विवाह के पश्चात् उस बहू को उसकी सास देहली मन्दिर दिखाने ले आई। वह इस उद्देश्य से लाई थी कि वह उस मन्दिर की मूर्ति के आगे पूजा आदि कराना चाहती थी। अभी-अभी जिस देवी का विवाह हुआ हो और उसकी सास कोई कार्य कहे, वह उसे इंकार कैसे कर सकती थी? उसने अपनी सास की बात मानते हुए मन्दिर में सास के साथ पहुँच गई। बहू वैदिक संस्कारों से ओतप्रोत होते हुए भी अपने सास को इंकार न कर सकी।

सास-बहू मन्दिर पहुँच जाती हैं। ज्यों ही वह मन्दिर के द्वार पर पहुँचती है तो बहू को एक सूत्र हाथ में आ गया। बहू ने देखा कि द्वार पर दो पहरेदार जो पत्थरों के बने थे, बन्दूक हाथ में लेकर खड़े हैं। बहू ने बनावटी भय दिखाते हुए सास से कहा, ''माता जी! मुझे बचाना, यह सिपाही बन्दूक लिए खड़ा है, कहीं हमें गोली न मार दे।'' सास ने देखा कि यह सिपाही पत्थर का बना है, क्या यह मेरी बहू नहीं जानती कि यह पत्थर का बना है, परन्तु उसने बहू को आश्वासन देते हुए कहा, ''बेटी! घबराने की आवश्यकता नहीं है, यह सिपाही तुम्हें गोली नहीं मार सकता, क्योंकि यह पत्थर का बना हुआ है।'' बहू ने कहा, ''ठीक है माताजी चलो अन्दर चलते हैं।'' थोड़ा आगे बढ़े तो एक शेर पत्थर का बना हुआ था। बहू ने उसे देखा और फिर कृत्रिम भय दिखाते हुए सास से बोली, ''माताजी मुझे बचाइये, यह शेर मुझे खा न जाये।''

क्रमश: अगले अंक में....

स्वास्थ्य-चर्चा

लहसुन के अनेक लाभ

गतांक से आगे....

कोल्ड कॉफी या कोल्ड ड्रिंक्स (ठण्डे पेय) का धन्धा भी गर्मियों में बहुत चलता है। इनसे पेट की आग बुझ जाती है और हाजमा बिगड़ने से खट्टे डकार आने लगते हैं। अगर एक गिलास पानी में दस-बारह बूंद लहसुनिया रस डालकर, उसम सौंफ, पुदीना और जीरा घोंटकर मिलाया जाये तो यह भी जायकेदार लहसुनिया कोल्ड ड्रिंक्स बन जाएगा। इसमें काला नमक और बर्फ का चूरा भी मिला सकते हैं। बर्फ तभी अनुकूल रहेगी अगर खाना खाये डेढ़ दो घण्टे बीत चुके हों। हैंड पम्प या घड़े-सुराही का पानी बर्फ जैसा ठण्डा होता ही है शरीर के तापमान के हिसाब से ज्यादा ठण्डा पीना अपना ही नुकसान करना है। नमकीन स्वाद नहीं भाता तो बूरा-खांड मिला लें।

मन्दाग्नि

कारण-पाचन शक्ति क्षीण होने, समय-असमय भोजन करने, आमाशय एवं आंतों की निष्क्रियता, अधिक मात्रा में पानी पीने से, मल-मूत्र व वायु का वेग रोकने, भोजन करने से पूर्व या बाद में जठराग्नि पचा नहीं पाती है जिसके कारण भूख लगनी बन्द हो जाती है।

लक्षण-भूख लगभग समाप्त-सी हो जाती है। पेट में हर समय भारीपन-सा महसूस होता है। पेट में अफारा, दर्द व वायु का गोला बन जाता है। जब यह वायु पेट में घूमने लगती है तो व्यक्ति की बेचैनी बढ़ जाती है, जिससे सांस लेने में कष्ट का अनुभव होता है। हृदय की धड़कन बढ़ जाती है। उठने-बैठने में भी परेशानी होती है।

उपचार-छिला हुआ लहसुन 10 ग्राम, जीरा 1 ग्राम, अदरक 1 ग्राम, कालीमिर्च 1 ग्राम सबकी चटनी बनाकर खाने के साथ दोनों समय खाने से मन्दाग्नि का रोग शीघ्र नष्ट हो जाता है।

हरा धनिया, पके लाल टमाटर, अदरक और लहसुन की चटनी बनाकर खाने से भूख खुलकर लगती है।

एक लहसुन पूरा छीलकर थोड़े पुदीने के पत्ते नमक और कालीमिर्च के साथ पीसें और इसी में नींबू निचोड़कर स्वादिष्ट चटनी चाट लें। खुलकर भूख लगेगी।

अगर पाचक आग ठंडी पड़ गई हो तो लहसुन की एक गांठ छीलकर उसमें एक-एक चुटकी सफेद काला जीरा, सेंधा नमक, सोंठ, शुद्ध गन्धक, बड़ी पीपल और हींग डालकर पीसें और नींबू निचोड़कर गोलियां बना लें। तीन-तीन रत्ती की गोलियां एक-एक करके दो-दो घण्टे में चूसें। चार घण्टों में ही जठराग्नि धधक उठेगी।

लहसुन की पांच कलियां पीसकर, दस बूंदें नींबू रस लहसुन की मिलाकर चाट लें। आधे घण्टे बाद मरोड़ उठने बंद हो जायेंगे। बच्चे को इससे आधी मात्रा दें।

वायु गोला (पेट फूलना)

कारण-अत्यधिक भोजन, अनियमित खान-पान से, आमाशय के फैल जाने से, हाजमा बिगड़ जाने से, बार-बार खाने से, पित्तजन्य अजीर्ण से अक्सर पेट फूल जाता है।

लक्षण-पेट की नसें तन जाने से सांस लेने में तकलीफ होती है। छाती में तेज जलन होती है तथा जी घबराने से हृदय की धड़कन तेज हो जाती है। सिर चकराने लगता है, सिर में तेज दर्द होता है। डकार आने या अपानवायु निकल जाने से रोगी व्यक्ति को कुछ राहत मालूम पड़ती है। यह रोग कुछ कठिनता से काबू में आता है।

उपचार-तीन लहसुन की कलियां, अदरक के रस में भिगोकर खाने के साथ चबाकर खाने से शीघ्र आराम आता है। लहसुन, काला जीरा, सफेद जीरा, शुद्ध गन्धक, सोंठ, कालीमिर्च, बड़ी पीपल, शुद्ध हींग और सेंधानमक सभी समान मात्रा में कूट-पीसकर नींबू के रस में खरल करके छोटे बेर के आकार की गोलियां बना लें। खाना खाने के बाद दोनों समय दो-दो गोलियां चूसने से पुराना अफारा रोग मिट जाता है।

इसमें बहुत बेचैनी होती है। दर्द भी होता है तथा जी घबराने लगता है। इस स्थिति में रोगी को उदरशूल जैसा उपचार करना ही हितकर है। पेट पर घृत या वैसलीन लगाकर तथा वैसलीन में ही मिला हुआ लहसुन का रस जरा-सा लगा देना चाहिए। परन्तु अफारा शान्त होते ही उसे शीघ्र से धो दिया जाए और केवल घी उस स्थान पर पुनः लगा दिया जाये। इस मरहम के लगाये बिना काम चल सके तो अच्छा है, क्योंकि उससे व्रण होने की आशंका रहती है।

क्रमशः अगले अंक में....

बुद्धिमानों के लिए संसार ही अध्यापक है

❑ आचार्य सोमदेव, आर्ष गुरुकुल मलारना चौड़, सवाई माधोपुर (राज०) मो० 9024669555

आचार्य चाणक्य पशु-पक्षियों से शिक्षा लेने का उपदेश कर रहे हैं। **कृत्स्नं ही लोको आचार्यः बुद्धिमतां**। बुद्धिमानों के लिए यह संसार ही पूरा का पूरा आचार्य होता है अर्थात् हम संसार से शिक्षा ले सकते हैं। सत्यपाल पथिक जी ने भी अपने भजन में कहा है-**दुनिया वालों पढ़कर देखो यह दुनिया खुली किताब है।** इस खुली पुस्तक में हम क्या-क्या पढ़ सकते हैं, वह हमारी योग्यता पर निर्भर करता है। आचार्य चाणक्य ने सिंह से एक, बगुले से एक, कुक्कुट से चार और कौए से पाँच, कुत्ते से छः और गधे से तीन गुण सीखने की बात कही है। गधे के तीन गुण कौन-कौन से हैं, जिनसे हम शिक्षा ले सकते हैं? लिखा है—

सुश्रान्तोऽपि वहेद्भारं शीतोष्णं न च पश्यति।
सन्तुष्टश्चरते नित्यं त्रीणि शिक्षेच्च गर्दभात्॥

गधे से तीन शिक्षा ले लेवें।

पहला कहा है—**सुश्रान्तो अपि वहेद् भारं**-थका हुआ होने पर भी भार को ढोता है, लेक़िन प्रतिक्रिया नहीं करता, उद्दण्डता नहीं करता, भार को ढोता रहता है तो यह एक विशेषता गधे की है कि थकान हो गई फिर भी भार को ढो रहा है। अनेक बार घर-गृहस्थी में, परिवार में व्यक्ति काम करते-करते उद्विग्न-सा हो जाता है। कभी-कभी सोचता है कहाँ फंस गये? क्या झमेला मोल ले लिया? व्यक्ति छटपटाहट-सी अनुभूत करता है, तो उस समय आचार्य चाणक्य कहते हैं कि गधे को ही देख लो! वह गधा थका हुआ होने पर भी भार ढोता रहता है। समय आने पर उसका भार उतरेगा भी और उसको विश्रान्ति भी मिलेगी। ऐसे ही घर गृहस्थ में जो व्यक्ति लगातार कार्य कर रहा है, अनवरत दायित्व निर्वहन कर रहा है। एक दिन उसका कार्य व दायित्व पूरा भी होगा और उसको विश्रान्ति भी मिलेगी।

दूसरा गुण गधे का कहा—**शीतोष्णं न च पश्यति गधा शीत**-उष्णता की चिन्ता नहीं करता। ऐसे ही जो व्यक्ति अपने लक्ष्य को प्राप्त करना चाहता है, अपने कार्य को सिद्ध करना चाहता है। आचार्य चाणक्य कहते हैं उसके लिए कोई बाधाएं नहीं होती, कोई रोक नहीं सकता। कोई व्यक्ति बहाने बनाकर बैठ जाए कि आज तो शीत बहुत है, आज परीक्षा देने नहीं जाएंगे। वर्षभर परिश्रम किया है और चार-पांच पेपर-परीक्षा देने से आगे का भविष्य बनना है लेकिन व्यक्ति शीत-उष्णता का विचार करे

और कहे कि आज मैं नहीं जा सकता। यहां पर गधे को याद करे। गधा शीत-उष्णता की चिन्ता नहीं करता, निरन्तर अपना कार्य करता रहता है ।

तीसरी-शिक्षा गधे से लेने के लिए कहा है—**सन्तुष्टश्चरते नित्यं गधा** नित्यप्रति सन्तोष का जीवन व्यतीत करता है। गधे को देखना उसे जैसे ही खोला जाए तब भी वह आनन्दपूर्वक घूमेगा, सुखपूर्वक रेत में लोट-पोट होता है, अधिक चिन्ता नहीं करता। स्वामी ने दो डण्डे भी मार दिए फिर भी थोड़ी देर बाद वैसे का वैसा। सन्तुष्ट रहता है। मनुष्य के लिए भी आचार्य चाणक्य कहना चाहते हैं कि गधे से ये शिक्षाएँ ले सकते हैं। गधे को देखकर के व्यक्ति सन्तुष्ट रह सकता है। संसार का सबसे मूर्ख प्राणी गधे को कहा जाता है। मनुष्यों ने मूर्ख मनुष्यों के लिए गधे की उपमा देनी प्रारम्भ कर दी। बार-बार गधे को अपमानित क्यों करते हो? ''बुद्धि तो व्यक्ति की कर्महीन है, जिसको कह रहे हैं बुद्धि में खोट तो सम्बन्धित व्यक्ति में है और गधे की उपमा दी जा रही है।'' गधा बहुत बुद्धिमान् है और बुद्धिमत्ता यदि गधे की देखी जाए और व्यक्ति की देखी जाए तो गधा प्रथम आएगा। दो मार्ग हैं वहां गधा बीच में खड़ा है। एक मार्ग उबड़-खाबड है और दूसरा मार्ग स्वच्छ है। एक मार्ग पर कीचड़, काँटे, रोड़े पड़े हैं और इसकी तुलना में दूसरा मार्ग स्वच्छ है तो गधा कौन-सा मार्ग अपनायेगा? परीक्षण करके देखेंगे तो उस काँटे वाले मार्ग पर गधा नहीं जायेगा, गधा भी अच्छे स्वच्छ रास्ते पर जाने का चयन करता है। अब मनुष्य को देख लो। मनुष्य के सामने दो रास्ते हैं, श्रेष्ठ मार्ग भी है और निकृष्ट मार्ग भी है, न्यूनताओं और निम्नताओं से भरा हुआ मार्ग है और निम्नताओं

से वर्जित श्रेष्ठमार्ग भी है लेकिन मनुष्य कौन से मार्ग को अपनाता है? जिसमें निकृष्टता हो ऐसे मार्ग को अपनाता है, तो गधे को क्यों दोष दिया जाए कि गधा निर्बुद्धि है। निर्बुद्धि तो मनुष्य अधिक है जो निकृष्ट से निकृष्ट कार्य करने को तत्पर रहता है और करता भी है। आचार्य चाणक्य वहां इन प्राणियों से, पशु-पक्षियों से भी शिक्षा लेने के लिए कह रहे हैं। इस अध्याय का उपसंहार करते हुए कह रहे हैं—

य एतान् विंशतिगुणानाचरिष्यति मानवः।
कार्यावस्थासु सर्वासु अजेयः स भविस्यति॥

कहा है कि जो मनुष्य इन बीस गुणों को अपना लेता है, जो अपने जीवन में धारण करेगा वह सब कार्यों और सब अवस्थाओं में विजयी होगा।

आगे के प्रसंग में आचार्य चाणक्य संकेत करना चाहते हैं कि हमें किसे-कौन-सी बातें बतानी चाहिए और कौन-सी बातें नहीं बतानी चाहिए? हम संसार के सामने रोते रहते हैं, अपने दुःखड़े सुनाते रहते हैं, लेकिन संसार को कोई लेना-देना नहीं होता। जब सुनाएगा तब तो उदास-सा मुंह बनाकर के व्यक्ति सुन तो लेता है, लेकिन बाद में उपहास उड़ाता है, उसकी खिल्ली उड़ाता है उसका वृत्तान्त और दूसरों को बढ़ा-चढ़ाकर बताता घूमेगा, तब आचार्य चाणक्य कहना चाहते हैं कि कौन-सी बात दूसरों को न बताई जाए और बताई जाए तो किसको बताई जाए? कहा—

अर्थनाशं मनस्तापं गृहे दुश्चरितानि च।
वञ्चनं चापमानं च मतिमान्न प्रकाशयेत्॥

मतिमान्न प्रकाशयेत्—कहा कि बुद्धिमान व्यक्ति इन बातों को प्रकाशित न करें, इन बातों को दूसरों के सामने न कहें। वे कौनसी बातें हैं?

आचार्य चाणक्य कहते हैं पांच बातें जो किसी के सामने बतानी नहीं होती है। पहली बात कही है—**अर्थनाशम्** यदि हमारे धन का कोई नाश हो गया है, तो आचार्य चाणक्य कहते हैं, यह बात किसी को न बताई जाए। "मैं लूट गया, मैं विनष्ट हो गया, मेरा धन, मूल्यवान् वस्तु की चोरी हो गई, मेरी इतनी हानि हो गई।" ये बताने की कोई आवश्यकता नहीं है। यदि गलत व्यक्ति को पता लग जाए कि इसके पास तो कुछ नहीं है, फूटी कौड़ी भी नहीं है, यह तो दीन-हीन हो गया है तो शत्रुभाव वाला व्यक्ति तुम्हारे साथ हानि पहुंचाने वाले क्या-क्या कार्य कर सकता है? आचार्य चाणक्य इसका संकेत कर रहे हैं। यदि कोई बड़ी हानि हो जाती है धन की दृष्टि से, व्यापार की दृष्टि से तो हर किसी को ये बातें नहीं बतानी चाहिए। 'हाँ', व्यक्ति यदि किसी बात को नहीं बताता तो अन्दर से भरा-भरा रहता है, विचलित रहता है, चिन्ताग्रस्त हो जाता है। ऐसी स्थिति में अपने जो अत्यन्त निकट के लोग हैं, अतिप्रिय लोग हैं, जो हमारा हित चाहते हैं उन लोगों को अपनी बात बताई जा सकती है, लेकिन किसी के भी सामने रोना-धोना नहीं करना होता है। अनुभव करके देख लेवें कि जिसने जिस किसी के सामने रोना-धोना किया है, अपनी समस्याएँ सुनाई है उसकी खिल्ली ही उडाई गई है। **अर्थनाशम्**-अर्थ की हानि हो गई है तो **मतिमान्न प्रकाशयेत्**-बुद्धिमान व्यक्ति किसी दूसरे को कुछ भी बताएं नहीं।

दूसरी बात कही है—**मनस्तापम्**-इसका तात्पर्य है मन का सन्ताप। कोई व्यक्ति मन से अत्यन्त दुःखी है, उद्विग्न है, किसी पारिवारिक समस्या को लेकर या अपनी स्वयं की समस्या को लेकर के व्यक्ति यदि अन्दर से संतप्त है, दुःखी है तो उसको सबके सामने बताते न घूमे। यदि हर किसी के सामने बताते घूमेंगे तो दूसरा व्यक्ति सहायता करेगा या नहीं यह तो पता नहीं। लेकिन हम अपने आपको छोटा अवश्य बना देंगे। दूसरा व्यक्ति कह सकता है कि देखो, "वैसे तो अपने आपको बुद्धिमान् समझता है, विद्वान् बना घूमता है और अपनी छोटी-सी समस्या को लेकर दुःखी कितना है।" उसके लिए भले ही छोटी-सी हो, लेकिन स्वयं के लिए तो बड़ी है, तब आचार्य चाणक्य कहते हैं कि अन्दर के दुःख को सभी को नहीं बताना चाहिए। 'हाँ' जो हमारे हितैषी हों, भला चाहते हों, छली-कपटी न हों, धार्मिक लोग हो उनको फिर भी बताया जा सकता है अन्यथा हम उपहास के ही पात्र बनेंगे।

तीसरी बात आचार्य चाणक्य कहते हैं-**गृहे दुश्चरितानि च**-घर में कोई चरित्रहीन व्यक्ति निकल गया, कोई व्यक्ति कर्महीन हो गया, चाहे सन्तान पुत्र या पुत्री हो, बहु हो, माता-पिता हो कोई इस प्रकार का दुश्चरित्र व्यक्ति घर में हैं और हमें पता लग गया कि यह भ्रष्ट व्यक्ति है, कर्महीन, चरित्रहीन है, दुराचारी है। तब आचार्य चाणक्य कहते है

कि यह बात भी किसी को न बताएं। घर की मर्यादा होती है, घर का सम्मान होता है। किसी व्यक्ति में न्यूनता है परिवार में और वह आचरण से भ्रष्ट हो गया तो यह बात सभी को नहीं बताना चाहिए। 'हां' ऐसे व्यक्ति को बताई जा सकती जो व्यक्ति उसके दोष को दूर कर सके, उसके जीवन में सुधार ला सके।

चौथा कहा है-**वञ्चनम्** अर्थात् किसी ने हमें ठग लिया है, बहुत सारे ठगे जाते हैं, तीर्थस्थानों पर गए हमें पता भी नहीं लगता कि हमें ठग लिया गया। ये जो पण्डे-पुजारी लोग मन्दिरों में बैठे हैं जो कि ठग हैं ये सारे, ठगते ही तो हैं। वहां तो हमें पता नहीं लगता क्योंकि हम तो अन्धश्रद्धा में घूमते रहते हैं लेकिन अनेक बार हमें पता लग जाता है कि मुझे तो ठगा गया है। आचार्य चाणक्य कहते हैं कि यदि हम ठगे गए हों और यह बात हमें पता चल गई है तो यह भी हर किसी को नहीं बतानी चाहिए! क्यों? क्योंकि हमारी ही न्यूनता प्रकट होगी, हमारी मूर्खता प्रकट होगी।

पाँचवा कहा है-किसी ने हमारा अपमान किया हो तो अपमान तो हो गया अब दूसरों के सामने जा-जाकर कहें कि उसने मुझे अपमानित कर दिया, तो उसका कोई अर्थ नहीं है। व्यक्ति अन्यों को बता-बता करके अपने संस्कार ही बिगाड़ता है। सास-बहु आपस में लड़ती हैं, पिता-पुत्र में कहा-सुनी हो गई हो, पुत्र ने पिता से कुछ छोटी बात कह दी हो और पिता उसे अपमान मान लेवे तो यह हर किसी को न बताएं, जहाँ-तहाँ बताता न घूमे। जो हितैषी हो, कल्याण की भावना रखता हो उसे बताया जा सकता है। अपमान जीवन में अनेक बार हो जाता है। कोई किसी का मूल्य नहीं समझता है। ऋषि दयानन्द जी का कितना अपमान किया करने वालों ने और उस अपमान के बारे में उन्होंने एक शब्द भी किसी को नहीं कहा। काशी शास्त्रार्थ जब चल रहा था, काशी के अन्दर जब महर्षि ने हुंकार भरी थी, राजा ने शास्त्रार्थ करवाया था और स्वामी दयानन्द जी के सामने कम से कम डेढ सौ (150) विरोधी बैठे हुए थे। जिसमें से 27-28 प्रख्यात विद्वान् थे। इतने सारे विद्वान् और एक ओर अकेले ऋषि दयानन्द थे। शास्त्रार्थ को सुनने के लिए हजारों लोग आए थे। शास्त्रार्थ में जब ऋषि दयानन्द जी विजयी हो रहे थे कि सायंकाल होते-होते जो धूर्त लोग थे उन धूर्त लोगों ने धूर्तता दिखानी प्रारम्भ कर दी और चिल्लाना शुरू कर दिया कहने लगे—''ऋषि दयानन्द हार गया, दयानन्द हार गया!'' उस समय स्वामी दयानन्द जी के ऊपर कीचड़ फेंका गया, लोगों ने जूते तक फेंके। जो एक कोतवाल था वहां वह स्वामी दयानन्द जी का श्रद्धालु था वह उन्हें लेकर के गया जहां ऋषि दयानन्द जी ठहरे थे। वहां पर एक व्यक्ति आया था जो शास्त्रार्थ को देख रहा था। उसने जाना था कि स्वामी दयानन्द जी पूर्णरूप से विजयी हुए थे और दूसरे विपक्ष के लोग उत्तर नहीं दे पाए थे। स्वामी दयानन्द जी का अपमान भी उस व्यक्ति ने देखा था। एक निर्मला साधु था, निर्मला साधु परीक्षण के लिए स्वामी दयानन्द जी के पास गया तब स्वामी दयानन्द जी ने प्रसन्नतापूर्वक उसको बिठाया, वार्तालाप की एक घण्टे तक। वह कहता है ''मैं स्वामी दयानन्द जी से वार्तालाप करता रहा, लेकिन उन्होंने एक भी वाक्य उस घटना के लिए नही बोला, ब्रह्म की वार्ता करते रहे, ईश्वर की वार्ता होती रही लेकिन जो अपमान हुआ था, जो कीचड़ फेंका था उसके लिए एक शब्द भी नहीं बोलें।'' निर्मला साधु कहता है कि स्वामी जी मैं तो आपका परीक्षण करने के लिए आया था कि आप कितने स्थिरचित्त हैं। उस समय निर्मला साधु ने स्वामी दयानन्द जी के चरण छुए और विदा हुए। इसलिए आचार्य चाणक्य कहते हैं कि अपमान भी हो जाए तो किसी को नहीं बताएं।

आवश्यक सूचना

आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा दयानन्दमठ रोहतक से सम्बन्धित समस्त आर्यसमाजों एवं संस्थाओं के अधिकारियों को अवगत कराया जाता है कि जो भी आर्यसमाज एवं संस्था सभा के PAN नम्बर तथा 80G का प्रयोग कर रही हैं, वह सभा कार्यालय को सूचित करें। ऐसा न करने की अवस्था में वह आर्यसमाज तथा संस्था हानि के लिए स्वयं जिम्मेवार होंगी।

—उमेद शर्मा, सभामन्त्री

सन् 1857 के स्वाधीनता आन्दोलन के सूत्रधारों में अग्रणी थे महर्षि दयानन्द सरस्वती जी

❑ पण्डित उम्मेद सिंह विशारद, वैदिक प्रचारक

सन् 1857 की स्वतन्त्रता आन्दोलन की क्रान्ति के असफल होने का कारण भीतरघात था और देशद्रोहियों के कारण असफलता मिली थी। इस क्रान्ति को अंग्रेजों ने बुरी तरह कुचल दिया था और स्वतन्त्रता का नाम लेना भी भयानक था, वन्दे मातरम् का नारा सुनते ही अग्रेंजी शासन उन्हें गोलियों से मारकर पेड़ों पर लटका देते थे। ऐसे विकट समय में महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने स्वतन्त्रता आन्दोलन नवजागरण किया था। 1857 से 1947 तक लाखों वीर शहीद हुए और लाखों ने भारत माता का तिलक अपने गरम-गरम रक्त से किया था। महर्षि की प्रेरणा से स्वतन्त्रता आन्दोलन का सूत्रधार हुआ। महर्षि दयानन्द सरस्वती जी के 1853 की क्रान्ति का विवरण इसी लेख में आगे लिखेंगे, पहले हम अग्रेंजी शासन के गवर्नर लार्ड मैकाले के सफेद झूठ में प्रकाश डालते हैं।

लार्ड मैकाले का सफेद झूठ कि आर्य बाहर से आये थे

लार्ड मैकाले ने भारत की शिक्षापद्धति को ही बदल दिया था और पाठशाला में पढ़ाया जाने लगा कि भारत के आर्य सर्वप्रथम बाहर से आये थे और भारत पर काबिज हो गये। हमारी तो जन्मभूमि, कर्मभूमि, धर्मभूमि यही आर्यवर्त (भारत) है। यहीं पर सर्वप्रथम ईश्वर ने मानव की उत्पत्ति की थी, यहीं पर चार ऋषियों को वेद ज्ञान दिया था, यहीं पर ऋषि पतञ्जलि ने व्यास ने दर्शनों का बोध कराया था, इसी धरती पर मार्यादा पुरुषोतम श्रीराम और योगिराज श्रीकृष्ण ने जन्म लिया था, यहीं पर महात्मा बुद्ध ने मानवता का पाठ पढ़ाया था, यहीं पर कुमारिल भट्ट ने वेदों की रक्षा की थी, यहीं पर छत्रपति शिवाजी, महाराणा प्रताप, भामा शाह, पृथ्वीराज चौहान, यहीं पर महारानी पद्मिनी, दुर्गा, मदालसा, द्रोपदी, अनुसूया, गान्धारी परम विदुषियां हुई हैं। यहीं पर झांसी की रानी, लक्ष्मीबाई रणचण्डी हुई है। इसी धरती पर बाल्मीकि, सूरदास, तुलसीदास, कबीरदास, रविन्द्रनाथ टैगोर, सन्त कवि हुए हैं, यहीं पर गुरु गोविन्दसिंह, वीर बन्दा वैरागी, सरदार भगतसिंह, चन्द्रशेखर आजाद, वीर सावरकर, सुभाषचन्द्र बोस, पं० लेखराम, स्वामी श्रद्धानन्द, महात्मा गांधी हुए हैं। यहीं पर योगिराज अरविन्द, बालगंगाधर तिलक, विपिनचन्द्रपाल, लाला लाजपत राय, महात्मा हंसराज, स्वामी विवेकानन्द और क्रान्तिकारी के अग्रदूत, महान समाज सेवक, रूढ़िवादी को उखाड़ने वाले, बली प्रथा, छुआछूत, जाति-पाति के सुधारक, तमाम अन्धविश्वासों को समाप्त करने वाले, वेदों की ओर लौटाने वाले, स्वतन्त्रता आन्दोलन का पाठ पढ़ाने वाले, सत्य ईश्वर की पूजा कराने वाले महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने जन्म लिया था।

हमारा तो सभी कुछ इस पवित्र धरती पर है। यही हमारी जन्मभूमि धर्मभूमि कर्मभूमि है। यहीं पर आर्यसमाज का सर्वोत्तम संगठन है, यहीं पर यहां की संस्कृति व संस्कारों को यदि बचा सकता है तो केवल आर्यसमाज ही है। यहीं पर आर्यसमाज राष्ट्रीय भावना को जगाता है और हिन्दू सभा के संस्थापक मदनमोहन मालवीय जी ने कहा था यदि आर्यसमाज दौड़ता है तो हिन्दू समाज चलता है। यदि आर्यसमाज चलता है तो हिन्दू समाज बैठ जाता है यदि आर्यसमाज बैठता है तो हिन्दू समाज सो जायेगा, यदि आर्यसमाज सो गया तो हिन्दू समाज मर जायेगा अर्थात् पुनः गुलाम हो जायेगा।

सन् 1857 का स्वाधीनता संग्राम और महर्षि दयानन्द की सक्रियता

1857 के स्वाधीनता संग्राम में साधु-संन्यासियों का महत्त्वपूर्ण योगदान रहा था। इनमें मुख्य भूमिका महर्षि दयानन्द जी की थी। यह सूचना श्री पृथ्वीसिंह मेहता विद्यालंकार ने प्रतिपादित की थी और पं० दीनबन्धु वेदशास्त्री द्वारा संकलित 'योगी का आत्मचरित्र' में जिसका स्पष्ट रूप से उल्लेख है। सन् 1857 के विद्रोह में जो जानकारी मिली

थी उसमें साधुओं का परिचय मिला था। ईस्ट इण्डिया कम्पनी के सरकार के सैनिक अफसरों तथा अधिकारियों का सीधा सम्पर्क संघर्ष के इस काल में उन्हीं लोगों का था। यह स्वाभाविक है कि महर्षि दयानन्द सरस्वती की सक्रियता प्रमुख रूप से रही थी उत्तर प्रदेश मुजफ्फरनगर के सर्वखाप पंचायत के महामंत्री चौधरी कबूल सिंह के पास उस पंचायत के पुराने रिकोर्ड विवरण सुरक्षित दशा में विद्यमान है।

मीर मीरासी के पत्र में पंचायत की बैठक का उल्लेख है, जो 1956 में हुई थी उसमें नानासाहिब, अजीमुल्ला खां, रंगू बापू और बहादुर शाह का एक शहजादा उपस्थित थे और उसके सम्मुख स्वामी विरजानद ने एक भाषण दिया था—जिसमें अंग्रेजों के शासन की बुराइयां प्रकाशित करके स्वराज्य की आवश्यकता बताई गयी थी। नि:सन्देह उन साधु-संन्यासियों में स्वामी विरजानन्द का महत्त्वपूर्ण स्थान था जो सैनिकों तथा सर्वसाधारण लोगों को अंग्रेजी शासन के विरद्ध उठ खड़े होने के लिये प्रेरित कर रहे थे। स्वामी विरजानन्द जी दसनामी संन्यासी थे और उनका सम्बन्ध शंकराचार्य द्वारा स्थापित संन्यासी सम्प्रदाय के साथ था।

श्री दीनबन्धु वेद शास्त्री द्वारा महर्षि जी का आत्मचरित्र प्रकाश में लाया गया है, उसके अनुसार सन् 1857 के स्वतन्त्रता संग्राम की योजना तैयार करने में महत्त्वपूर्ण कार्य था। 1955 में कुम्भ के अवसर पर नानासाहब, अजीमुल्ला खां, झांसी की रानी आदि से हरिद्वार में भेंट की थी और स्वतन्त्रता आन्दोलन पर गम्भीर विचार विमर्श हुआ था।

सन् 1857 के स्वाधीनता संग्राम की योजना यद्यपि ओमानन्द और पूर्णानन्द द्वारा तैयार की गयी थी। उसे क्रियान्वित करने में स्वामी विरजानन्द जी का कार्य महत्त्वपूर्ण था। स्वामी विरजानन्द जी ने जान-बूझकर मथुरा को अपना केन्द्र बनाया था। वहां पर स्वामी दयानन्द जी, स्वामी विरजानन्द के नेतृत्व में कार्य करने को तत्पर थे। विरजानन्द जी स्वामी दयानन्द के गुरु थे तथा उनके भी गुरु स्वामी पूर्णानन्द इस स्वतन्त्रता यज्ञ का पौरोहित्य कर रहे थे।

श्री पृथ्वीसिंह मेहता ने सन् 1857 के स्वाधीनता संग्राम में महर्षि दयानन्द सरस्वती जी के महत्त्वपूर्ण योगदान के सम्बन्ध में कहा था, जिससे अनेक विद्वानों का ध्यान उनकी ओर आकर्षित हुआ था। जिससे सत्यता को मुग्धकंण्ठ से स्वीकार किया था और कहा था यह यथार्थ घटना है। दैनिक हिन्दुस्तान तथा साप्ताहिक आर्योदय आदि अनेक पत्रों में इस विषय पर लेख प्रकाशित हुए थे और आर्यसमाज के अनेक विद्वान् यह प्रति प्रतिपादित करने में तत्पर हो गये थे कि 1857 की क्रान्ति में महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने न केवल सक्रिय रूप से भाग ही लिया था अपितु उसका नेतृत्व भी किया था।

इस संक्षिप्त लेख में मेरा केवल सभी पाठकों से यह निवेदन कृत्य मात्र है कि महर्षि दयानन्द सरस्वती जी का स्वतन्त्रता संग्राम की पृष्ठभूमि में पूर्ण योगदान रहा है जो उनके लिखे अमूल्य ग्रन्थों में भी विदित होता है।

संम्पर्क-गढ़ निवास मोहकमपुर, देहरादून (उत्तराखण्ड)
मो० 9411512019, 9557641800

जिस ऋषि ने वेद का प्रचार किया

जिस ऋषि ने वेद का प्रचार किया, लोगों ने विष का दान दिया।
पथभ्रष्ट किसी को न होने दिया, वेद का सब को सद्ज्ञान दिया॥ टेक॥
जब याद ऋषि की आती है, सब आर्य दु:खी हो जाते हैं।
किये मानव पर उपकार सदा, सब याद हमें आ जाते हैं।
न भूल कभी यह जग पाएगा, ऋषि ने विष का पान किया।
पथभ्रष्ट किसी को न होने दिया, वेद का सब को सद्ज्ञान दिया॥ 1॥
कर्त्तव्य पथ को भूले थे हम, सब मानवता खो बैठे थे।
छल-कपट सब करते थे, हम शुभ कर्मों से हेठे थे।
अन्धकार, अन्याय मिटा करके, नारी को श्रेष्ठ पद मान दिया।
पथभ्रष्ट किसी को न होने दिया, वेद का सब को सद्ज्ञान दिया॥ 2॥
मांस-मदिरा सेवन करना, लोगों ने अपनाया था।
वेद विरुद्ध बतलाकर सब, ऋषि ने हमें समझाया था।
सत्यमार्ग पर चलना सिखलाकर, सबको जीवन का स्वाभिमान दिया।
पथभ्रष्ट किसी को न होने दिया, वेद का सब को सद्ज्ञान दिया॥ 3॥
अत्याचार, अन्याय, अविद्या, सर्वत्र लोलुपता छाई थी।
छूत-छात और जाति-पाति की, सर्वत्र फैली हुई बुराई थी।
सब मतभेद मिटा करके, ऋषि ने सबको एक समान दिया।
पथभ्रष्ट किसी को न होने दिया, वेद का सब को सद्ज्ञान दिया॥ 4॥
सर्वत्र व्यापक परमेश्वर को, निराकार बतलाया था।
त्रैतवाद का किया समर्थन, एक ईश्वर बतलाया था।
पूर्ण योगी होने पर भी, न ऋषि ने कभी अभिमान किया।
पथभ्रष्ट किसी को न होने दिया, वेद का सब को सद्ज्ञान दिया॥ 5॥

—देशराज आर्य, सेवानिवृत प्रधानाचार्य,
म०नं० 725, सै०-4, रेवाड़ी, मो० 9416337609

हम क्यों हारे? दास्तान-ए-गद्दारी (8)

❑ राजेश आर्य, गांव आट्टा, जिला पानीपत मो० 9991291318

प्रिय पाठकवृन्द! क्रांतिवीर भगतसिंह ने लिखा है—''स्वतन्त्रता प्राप्ति के लिए हम में सतगुरु रामसिंह-सा समर्पण चाहिये, नामधारी शहीदों जैसा मनोबल चाहिए, जो स्वयं फांसी की डोर गले में डाल सके और आग उगलती तोपों के सामने भी खिलखिलाकर हँस सके।''

नेताजी सुभाषचन्द्र बोस ने अपना मुख्य कार्यालय रंगून (बर्मा) में स्थापित किया, तो उन्होंने सतगुरु रामसिंह का अभिवादन करते हुए ये शब्द कहे—''गुरु रामसिंह जी द्वारा लहराये हुए स्वतन्त्रता के झण्डे के नीचे नामधारियों ने जो बलिदान दिया, उस पर देश को सदा गर्व रहेगा।''

डॉ० राजेन्द्र प्रसाद (राष्ट्रपति) ने लिखा है—''असहयोग आन्दोलन के जिस अस्त्र को चलाकर हमाने आजादी प्राप्त की, इसका आरम्भ सतगुरु रामसिंह जी ने (1920 ई० से) 50 वर्ष पूर्व किया था।''

संभवत: 1857 के कलंक को धोने के लिए पंजाब की धरती पर आध्यात्मिक संत रामसिंह ने एक नई क्रान्ति का सूत्रपात किया। महाराजा रणजीत सिंह के सैनिक रामसिंह ने 1861 ई० में गुरु बालक सिंह की मृत्यु के बाद कूका सम्प्रदाय को व्यवस्थित कर लाखों नामधारी गोरक्षा व अंग्रेजों का बहिष्कार करने के लिए तैयार कर लिये। परतन्त्रता की बेड़ियाँ काटने के लिए गुरु रामसिंह ने अपने अनुयायियों में आत्मबल, त्याग, कुर्बानी और राष्ट्रीय चेतना भर दी। उन्होंने अपने शिष्यों को प्रेरणा दी कि वे विदेशी शत्रुओं को बहिष्कार करें, सरकारी नौकरियों से त्याग-पत्र दे दें, अंग्रेजी शिक्षण संस्थाओं का बहिष्कार करें, अंग्रेजी कानून न मानें और हर उस बात को अस्वीकार करें जिसके लिए उनकी आत्मा नहीं मानती। इसी प्रेरणा के परिणाम स्वरूप अमृतसर में खुले दो बूचड़खानों पर दस नामधरी सिखों ने 14 जून 1871 की रात में हमलाकर बूचड़ों का सफाया कर दिया व गायों को मुक्त कर दिया। इसके बाद सभी कूके भैणी की तरफ चल पड़े। शहर में पुलिस ने मनमानी पकड़-धकड़ शुरू कर दी। जब ये कूके भैणी पहुँचे और गुरु रामसिंह को सब हाल बताया, तो गुरु ने इनको सच्चे शूरवीर का मार्ग बताया और आदेश दिया कि वहाँ जाकर अपने अपराध को स्वीकार कर लें और निरपराध लोगों को फांसी से बचा लें। कूके तो इनकी बात पर जान देते थे। वे सब अदालत में जा उपस्थित हुए और कहा—''बूचड़ (कसाई) हमने कत्ल किये हैं।'' इनमें से चार को फांसी (15 सितम्बर), तीन को काला पानी की सजा व तीन को देशद्रोही घोषित कर दिया। निदोर्षों को बचाकर ये गोरक्षक वीर हँसते-हँसते दण्ड स्वीकार कर रहे थे।

2. रायकोट, जिला लुधियाना के गुरुद्वारे के महन्त ने बड़े दु:ख के साथ गुरुद्वारे के निकट गऊ-वध का समाचार संगत को बताया। यह सुनकर कूका वीरों का मन रोष से भर गया और 15 जुलाई 1871 को रात के 10 बजे गुरमुख सिंह, संत मंगल सिंह व संत मस्तान सिंह ने कई बूचड़ों को मार डाला और वध होने वाली गायों के रस्से काटकर मुक्त कर दिया। सरकार एक हजार रुपये की इनाम की घोषणा की, तो तीन लोगों ने लालच में आकर पांच व्यक्तियों को पकड़वा दिया, जिनमें ज्ञानसिंह और रत्नसिंह बिलकुल निर्दोष थे। पर सरकार ने झूठे गवाह बनाकर पांचों को फांसी का दण्ड दे दिया। 5 अगस्त को गुरमुखसिंह आदि तीन को व 26 नवम्बर को ज्ञानसिंह व रत्नसिंह को फांसी दे दी।

3. 11-12 जनवरी 1872 को भैणी के माघी मेले में इन दोनों घटनाओं की काफा चर्चा रही। सरदार हरिसिंह और लहरासिंह ने आपस में विचार करके मेले में एक रेखा खींचकर आह्वान किया कि जो लोग गऊ-रक्षा के लिए अपने प्राणों की आहुति देना चाहते हैं वे इस रेखा के अन्दर आ जायें। तत्काल 140 व्यक्ति (जिनमें कुछ बच्चे और औरतें भी थीं) इस रेखा के अन्दर आ गये।

13 जनवरी को यह जत्था मलेरकोटला के लिए रवाना हुआ और 15 जनवरी को प्रात: सात बजे मलेरकोटला के

शेष पृष्ठ 13 पर....

आर्य कौन हैं और इनका मूलस्थान?

❑ मनमोहन कुमार आर्य, 196 चुक्खूवाला-2, देहरादून-248001 फोन-9412985121

मनुष्य श्रेष्ठ गुण, कर्म व स्वभाव को ग्रहण करने से बनता है। विश्व में अनेक मत, सम्प्रदाय आदि हैं। इन मतों के अनुयायी हिन्दू, ईसाई, मुसलमान, आर्य, बौद्ध, जैन, सिख, यहूदी आदि अनेक नामों से जाने जाते हैं। मनुष्य जाति को अंग्रेजी में Human कहा जाता है। यह जितने मत व सम्प्रदायों के लोग हैं यह आकृति व शरीर तथा इसके अंगों व इन्द्रियों की दृष्टि से सब समान हैं। इनको अनेक मतों में विभाजित करने की क्या कोई आवश्यकता थी? यह एक गम्भीर प्रश्न है। इन मतों का आरम्भ उन-उन देशों में अज्ञानता, अन्धविश्वासों व मिथ्या परम्पराओं को दूर करने की दृष्टि से किया गया था। मनुष्य अल्पज्ञ होता है। वह ज्ञान व शक्ति की दृष्टि से पूर्ण समर्थ नहीं हो सकता। पूर्ण समर्थ तो केवल सर्वव्यापक, सर्वशक्तिमान्, सर्वज्ञ तथा सर्वाधार सत्य-चित्त-आनन्दस्वरूप परमात्मा ही होता है। मनुष्य जाति का यदि कोई एक नाम रखना तो तो वह गुणों व अवगुणों के नाम पर रखा जाना चाहिये। हमारे पूर्वज विश्व में बुद्धि और ज्ञान की दृष्टि से श्रेष्ठ व सर्वोत्तम थे। उन्होंने इसी सिद्धान्त को अपनाया और मनुष्य को गुण, कर्म व स्वभाव के आधार पर मुख्यत: दो नामों आर्य व अनार्य से प्रस्तुत किया। श्रेष्ठ गुण, कर्म व स्वभाव वाले मनुष्यों को 'आर्य' तथा गुणहीन और दुष्कर्म करने वालों को 'अनार्य' नाम से सम्बोधित किया जाता था। आर्य नाम हिन्दू, मुस्लिम, सिख व ईसाई की भांति कोई मत के आधार पर दिया गया नाम नहीं है अपितु आर्य का एक गौरवपूर्ण अर्थयुक्त होता है जिसको सत्य सिद्ध करने व धारण करने से मनुष्य 'आर्य' बनता है।

हमारे देश में आदिम वा आदि चार ऋषियों को सच्चिदानन्दस्वरूप, सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान्, सर्वव्यापक व सर्वान्तर्यामी ईश्वर से चार वेदों का ज्ञान मिला था। इन्हीं ऋषियों अग्नि, वायु, आदित्य और अंगिरा ने अन्य ऋषि ब्रह्मा जी को इन चार वेदों का ज्ञान दिया और इन सबने अन्य सभी मनुष्यों में वेद ज्ञान का प्रकाश किया। महाभारत काल तक भारत व विश्व के अनेक देशों में ऋषि परम्परा चली। भारत के यह ऋषि वेद धर्म प्रचार के लिये विश्व के अनेक देशों यहां तक कि अमेरिका जिसे पाताल देश कहा जाता है, जाया करते थे। महाभारत युद्ध में हुए विनाश से समूचे देश-देशान्तर में अव्यवस्था फैल गई जिस कारण अध्ययन-अध्यापन की सुविधा न होने से ऋषि परम्परा बन्द हो गई। ऋषि दयानन्द ने अपने अपूर्व पुरुषार्थ से वेदों का यथार्थ ज्ञान प्राप्त किया और ऋषियों की तरह उसका देश-देशान्तर में प्रचार किया। उन्होंने जो बातें कही हैं वह केवल पुस्तकों में पढ़कर नहीं, अपितु पुस्तकों की उन मान्यताओं को बुद्धि व तर्क पर आधारित बनाकर स्वीकार किया और केवल सत्य मान्यताओं का ही देश व समाज में प्रचार किया। उन्होंने अपनी तर्कणा शक्ति से सत्य के स्वरूप का साक्षात् किया था। अज्ञान व अन्धविश्वासों से रहित उस अन्वेषित तथा विवेचित सत्य का उन्होंने निर्भीकतापूर्वक देशभर में प्रचार किया। अंग्रेजी राज्य होने पर भी अपने जीवन को जोखिम में डालकर वह देश के अनेक भागों में गये और बिना अंगरक्षकों के वेदों का प्रचार करते रहे। उन्होंने सिद्ध किया था कि वेद ईश्वरीय ज्ञान है और इसकी सभी मान्यतायें सत्य एवं तर्कपूर्ण हैं। वेदों के प्रचार के लिये उन्होंने विपक्षी विधर्मियों से शास्त्रार्थ भी किये थे और सबको अपने ज्ञान व तर्कों से प्रभावित किया था। वह धर्म विषयक ज्ञान के अजेय योद्धा थे। इसका प्रमाण उनका ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश है। इस ग्रन्थ में उन्होंने सभी मत-मतान्तरों की समीक्षा करने के साथ आरम्भ के दस अध्यायों में तर्क व बुद्धिगम्य वैदिक धर्म का सत्य स्वरूप प्रस्तुत किया है। अद्यावधि उनकी वैदिक मान्यतायें अखण्डीय बनी हुई हैं जबकि सभी मतों की एक व दो नहीं अपितु अनेक मान्यताओं को उन्होंने तर्क की कसौटी पर कस कर अविद्यायुक्त, असत्य व अप्रमाणिक सिद्ध किया था।

ऋषि दयानन्द ने वेदों के सत्य ज्ञान व मान्यताओं के आधार पर 'आर्य' शब्द पर भी अपने मन्तव्यों को अपने ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश तथा आर्योद्देश्यरत्नमाला में प्रस्तुत किया है। आर्योद्देश्यरत्नमाला में वह आर्य शब्द का उल्लेख कर इसका स्वरूप व परिभाषा देते हुए कहते हैं कि ''जो श्रेष्ठ स्वभाव, धर्मात्मा, परोपकारी, सत्यविद्यादि गुणयुक्त और

आर्यावर्त देश में सब दिन से रहने वाले हैं, उनको आर्य कहते हैं।'' आर्यावर्त देश के विषय में उन्होंने बताया है कि ''हिमालय, विन्ध्याचल, सिन्धु नदी और ब्रह्मपुत्रा नदी, इन चारों के बीच और जहां तक इनका विस्तार है, उनके मध्य में जो देश है, उसका नाम 'आर्यावर्त देश' है।''

ऋषि दयानन्द ने अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश के अन्त में अपने मन्तव्यों को सूचीबद्ध किया है। अपने 'स्वमन्तव्यामन्तव्यप्रकाश' में आर्य शब्द के विषय में वह लिखते हैं—जैसे 'आर्य' श्रेष्ठ और 'दस्यु' दुष्ट को कहते हैं वैसे मैं भी मानता हूं।' अपने मन्तव्यों में आर्यावर्त की भी उन्होंने वही परिभाषा दी है जो आर्योद्देश्यरत्नमाला में दी है। यहां कुछ शब्दों में भिन्नता है, परन्तु आशय वही है और इस परिभाषा से आर्यावर्त की परिभाषा अधिक स्पष्ट होती है। वह लिखते हैं, '' आर्यावर्त देश इस भूमि का नाम इसलिये है कि इस में आदि सृष्टि (मानव सृष्टि के आरम) से आर्य लोग निवास करते हैं परन्तु इस की अवधि उत्तर में हिमालय, दक्षिण में विन्ध्याचल, पश्चिम में अटक और पूर्व में ब्रह्मपुत्र नदी है। इन चारों के बीच में जितना प्रदेश है उसको 'आर्यावर्त' कहते हैं और जो इसमें सदा रहते हैं उन को भी आर्य कहते हैं।''

ऋषि दयानन्द के उपर्युक्त विचार प्रमाणों से पुष्ट हैं। हमारे देश में आठवीं शताब्दी में विदेशी मांस मदिरा भक्षी लोग आये और यहां छल, बल व अन्याय से हिन्दुओं को पीड़ित किया। हिन्दू जनता अन्धविश्वासों एवं अविद्या से ग्रस्त थी। इनका विद्या को प्राप्त न होने से पतन हुआ। इस पर भी इनमें कोई ऐसा महापुरुष नहीं हुआ जो इनकी अविद्या व अन्धविश्वासों को दूर करके इन्हें संगठित करता। सबने अपने अपने मत व वाद चलाये और मृत्यु का ग्रास बन गये। सौभाग्य से उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में ऋषि दयानन्द का प्रादुर्भाव हुआ। वह विद्यानिपुण थे। उनके समय में विद्यमान धर्माचार्यों व मत-मतान्तरों की दृष्टि से वह वेद, विद्या व धर्मज्ञान की दृष्टि से सूर्य के समान थे। वह आदर्श बाल ब्रह्मचारी थे और वेदों के मर्मज्ञ विद्वान् थे। उन्हें भारत का यथार्थ इतिहास विदित था। उनसे ही पता चला कि हमारे रामायण और महाभारत ग्रन्थों को हमारे ही कुछ पण्डितों ने प्रक्षेप कर भ्रष्ट कर दिया है। दस-बीस हजार श्लोकों का भारत प्रक्षिप्त होकर एक लाख से अधिक श्लोकों का बना दिया गया। 18 पुराणों की भी उन्होंने परीक्षा की और उन्हें अन्धविश्वासों से युक्त अविश्वसीय काल्पनिक कथाओं तथा अश्लील प्रसंगों का भण्डार बताया। उन्होंने पुराणों को त्याज्य कोटि के ग्रन्थ बताया। वह वेद, उपनिषद्, दर्शन, प्रक्षेप रहित विशुद्ध मनुस्मृति आदि ग्रन्थों को धर्म के आचरण व पालन के लिये उपयोगी मानते थे और इसी का उन्होंने प्रचार किया। सत्यार्थप्रकाश में उन्होंने मान्य ग्रन्थों की सूची भी प्रस्तुत की है। उनके कार्यों से अन्धविश्वास व अविद्या के कुछ बादल झंटे परन्तु हिन्दू जाति में अविद्या का संस्कार इतना गहन व प्रबल है कि सभी लोग ऋषि दयानन्द की अमृत के समान अमोघ औषधि 'विद्या' को स्वीकार कर उससे लाभान्वित नहीं हुए। इसे विधि की विडम्बना ही कह सकते हैं। मुस्लिम शासन काल में भी हमारे यशस्वी योद्धाओं वीर शिवाजी, महाराणा प्रताप, गुरु गोविन्द सिंह, महाराजा रणजीत सिंह आदि ने शत्रुओं से लोहा लिया और अपने राज्यों को स्वतन्त्र रखते हुए उनका शासन व संचालन किया था।

दिल्ली में मुस्लिम शासन के पतन के बाद अंग्रेजों ने छल व बल से देश पर कब्जा किया और यहां कि वैदिक संस्कृति को कुचलने के लिये कुछ मिथ्यावाद प्रस्तुत किये जिनमें से एक यह है कि आर्य भारत के मूल निवासी नहीं अपितु यह बाहर, ईरान आदि स्थान, से आये थे। इन अंग्रेजों व इनके समर्थक बुद्धिजीवियों ने अपनी मान्यता के समर्थन में कोई पुष्ट प्रमाण प्रस्तुत नहीं किया लेकिन अपनी चोरी और सीना जोरी से इसे मनवा लिया क्योंकि शासन इनका था। इस विषय की सच्चाई जानने के लिये सच्चे जिज्ञासुओं को स्वामी विद्यानन्द सरस्वती जी की प्रसिद्ध पुस्तक 'आर्यों का आदि देश और उनकी सभ्यता' को पढ़ना चाहिये। आर्य ही भारत के मूल निवासी एवं आदिवासी हैं। आर्यों का उदय भारत में ही हुआ था। आर्य ही विद्या से विमुख होने से अनार्य, द्रविण व अन्यों देश में जाकर कालान्तर में ईसाई, यहूदी व अन्य मतों के अनुयायी बनें। प्रो. मैक्समूलर यह स्वीकार करते हैं कि उनके पूर्वज पूरब से पश्चिमी देशों में गये थे।

सत्य सत्य होता है जो अपना प्रभाव दिखाता है। वेद संसार की प्रथम पुस्तक है। वेद में आर्य शब्द का प्रयोग है जिसका अर्थ कोई जाति नहीं अपितु श्रेष्ठ गुण, कर्म व

स्वभाव वाला मनुष्य होता है। वेद के बाद ऋषियों द्वारा ब्राह्मण, मनुस्मृति, उपनिषद् तथा दर्शन ग्रन्थों की रचनायें हुईं। इनमें से किसी ग्रन्थ में आर्यों के आर्यावर्त व भारत से बाहर कहीं और किसी मूल स्थान का वर्णन नहीं है। दूसरे आदिवासी कहे जाने वाले लोगों के किसी प्राचीन ग्रन्थ में आर्य व द्राविणों के युद्ध का वर्णन नहीं है न ही आर्यों के ग्रन्थों में है। ऐसी स्थिति में यही कहना व मानना उचित होगा कि अंग्रेजों ने भारतीयों को देश की आजादी से विमुख करने के लिए स्वार्थवश आर्यों के भारत से बाहर से आने का असत्य मत प्रचारित किया था। भारत अर्थात् आर्यावर्त ही आर्यों वा हिन्दुओं का मूल देश है। आर्य जाति सूचक शब्द नहीं है। आर्य का यदि अंग्रेजी में अनुवाद करें तो इसका एक अर्थ जेंटलमैन अर्थात् सदाचारी मनुष्य हो सकता है।

अत: संसार के वह सभी लोग आर्य हैं जो सच्चे ईश्वरभक्त आस्तिक हैं, ज्ञानी हैं, सदाचारी हैं, निष्पक्ष, सच्चे धार्मिक एवं देशभक्त है, अहिंसक प्रवृत्ति के हैं, सभी मूक व अहिंसक पशुओं के प्रति दया करने वाले हैं तथा वेद की शिक्षाओं के अनुसार चलने वाले हैं। हमारा इस लेख को लिखने का मात्र यही उद्देश्य था कि सभी देशवासी आर्य शब्द का सत्य अर्थ जान सकें और विदेशियों तथा भारत के छद्म सेकुलरों द्वारा चलाये गये मिथ्यावाद व मान्यता की सत्यता को जान सकें। लेख को विराम देने से पूर्व यह भी बता दें सृष्टि की आदि में मानव की उत्पत्ति वर्तमान के तिब्बत प्रदेश में हुई थी। सृष्टि के आरम्भ इन्हें ही परमात्मा व उसके बाद ऋषियों से चार वेदों का ज्ञान प्राप्त हुआ था। यह सब लोग आर्य थे। उन दिनों संसार के अन्य किसी स्थान पर मानव सृष्टि नहीं हुई थी। तिब्बत में जब रहने वाले कुछ आर्यों में विचार मतभेद आदि होने से विवाद हुए तब इनमें से कुछ लोग विश्व के सुदूर प्रदेशों में अपने वायुयानों से जाकर बस गये थे। ऋषि दयानन्द की पुस्तक उपदेशमंजरी में इसका उल्लेख हुआ है। समय के साथ अनेक परिवर्तन हुए। इन्हीं में एक एक यह परिवर्तन है कि महाभारत के बाद आर्यावर्त से बाहर रहने वाले लोग वैदिक ज्ञान के प्रचार की समुचित व्यवस्था न होने से धर्म व मत की दृष्टि से वैदिक मत से इतर अन्य मतों के अनुयायी व आग्रही हो गये।

दास्तान-ए-गद्दारी (7)...

पृष्ठ 10 का शेष....

बूचड़खाने पर आक्रमण कर दिया। वहाँ पर पुलिस के साथ इनकी मुठभेड़ भी हुई, परन्तु विजय नामधारियों की हुई। इसमें 10 लोग मारे गए और 17 घायल हो गये। इससे नामधारियों पर कहर टूट पड़ा। अंग्रेज सेना ने इनका जंगलों में पीछा किया। रठनामी गांव में जब ये वीर विश्राम कर रहे थे, तब उत्तमसिंह थानेदार ने इन्हें धोखे से गिरफ्तार कर लिया और शेरपुर की जेल में बन्द कर दिया।

17-18 जनवरी को गोभक्त स्वतन्त्रता-सेनानियों के विरुद्ध विश्व का सर्वाधिक क्रूरता एवं अन्यायपूर्ण इतिहास रचा गया। नाभा, पटियाला और जीन्द रियासतों से तोपें मंगवाकर मलेरकोटला के मैदान में 50 कूके वीर तोपों से बांधकर उड़ा दिये गये। लुधियाना का अंग्रेज डिप्टी कमिश्नर कॉवन पुलिस को कूकों को तोपों से उड़ाने का आदेश दे रहा था। एक-एक कूका वीर जय बोलता हुआ बारी-बारी से तोप के सामने आता और तोप के गोले के दगने के साथ ही उसकी धज्जियां हवा में बिखर जातीं। जब 50वां कूका बिशनसिंह (13 वर्षीय) आया, तो कॉवन की मेम ने उसे बचाने का प्रयत्न किया। कॉवन ने उस बालक को कहा— "यदि तुम कह दो कि मैं गुरु रामसिंह का शिष्य नहीं हूँ, तो तुम्हें छोड़ दिया जाएगा।"

यह सुनते ही उस बालक ने दौड़कर कॉवन की दाढ़ी पकड़ ली और जब तक कॉवन अपनी दाढ़ी उससे न छुड़ा सका, जब तक तलवार से बालक के दोनों हाथ नहीं काट दिये गये। कॉवन बालक को वहीं कत्ल करा दिया।

दूसरे दिन शेष 18 कूके मलौंध में फांसी पर चढ़ा दिये गये। इसी दिन गुरु रामसिंह को 22 विशेष सहयोगियों के साथ गिरफ्तार कर अलग-अलग स्थानों पर निर्वासित कर दिया। 5 मास तक गुरु रामसिंह को इनके सेवक नानूसिंह के साथ सेंट्रल जेल रंगून (बर्मा) में रखा गया। 18 दिसम्बर 1880 को गुरु जी को सरगोई भेज दिया गया। इसके बाद इनके बारे में कुछ पता नहीं चल सका। इसके बाद भी कूका नामधारियों पर अंग्रेजी सरकार के बर्बर अत्याचार जारी रहे। इसमें पटियाला के राजा ने अंग्रेजों का साथ देकर देशद्रोह का पाप अपने सिर पर ले लिया।

सोचिये, क्या प्रत्येक सिख गुरु गोविन्दसिंह, गुरु रामसिंह व भगतसिंह जैसे सम्मान का अधिकारी है।

पितरों का वास्तविक श्राद्ध—जीवितों की सुसेवा

❑ आचार्य रामज्ञानी आर्य, महामंत्री जिला आर्य प्रतिनिधि सभा देवरिया (उत्तर प्रदेश)

आश्विन कृष्णपक्ष पितृपक्ष कहलाता है। इस पक्ष में पौराणिक वर्ग भोजन व वस्त्र देकर मृतकों के श्राद्ध, तर्पण कर आत्मतुष्टि का जो स्वांग रचता है, उसके ज्ञान लोचन खोलने के लिए यह आवश्यक है कि हम लोग वैदिक दृष्टिकोण की वास्तविकता को समझें। सर्वप्रथम अन्त्येष्टि संस्कार, श्राद्ध एवं तर्पण पर विचार करेंगे। मरने वाला व्यक्ति तो इस संसार से चला गया है। वह तो **'यथा कर्म तथा श्रुतम्'** ज्ञान व कर्म के अनुसार मोक्ष की स्थिति को या अन्य किसी योनि को प्राप्त करेगा, परन्तु जो उसका पड़ा हुआ मृत शरीर है, उसको संस्कृत करना होता है। जिसके आगे उस शरीर के लिए अन्य कोई संस्कार नहीं है।

भस्मान्तꣳ शरीरम्। यजु०अ० 40, मं० 151, यह स्पष्ट हो चुका है कि दाह कर्म और अस्थि संचयन से पृथक् मृतक के लिए दूसरा कोई कर्म, कर्त्तव्य नहीं है, इसलिए दाहकर्म करना सर्वोत्तम विधि है। श्राद्ध करना चाहिए या नहीं? यह प्रश्न सदा आता रहता है। 'श्राद्ध' करना चाहिए। जीवित माता-पिता, दादा-दादी, नाना-नानी, गुरु-आचार्य तथा अन्य वृद्धजनों एव विद्वान् लोगों की अत्यन्त श्रद्धापूर्वक सेवा करनी चाहिए। इसी का नाम श्राद्ध है। 'पितर' शब्द का क्या अर्थ है? पितर कौन है? इस पर जरा सोचिये—'पा रक्षणे' धातु से पितर शब्द सिद्ध होता है। पितर का अर्थ पालक, रक्षक और पिता होता है। पिता और पितर ये दोनों समानार्थक हैं। किन्तु जीवित माता-पिता ही रक्षण और पोषण कर सकते हैं। अत: मृतकों की 'पितर' संज्ञा मानना सर्वथा भूल है। क्योंकि रक्षा कार्य मृतकों द्वारा नितान्त असम्भव है। पिता और पितर का प्रयोग शास्त्रों में जीवित के लिए आया है। ब्र०पु० में भी बताया गया है कि विद्या देने वाला, अन्न देने वाला, जन्मदाता, कन्या देने वाला, भय से रक्षा करने वाला और बड़ा भाई ये सब पितर कहे जाते हैं। जैसे—**अन्नदाता, भयत्राता, पत्नीमातः तथैव च। विद्या दाता, जन्मदाता पंचैते पितरो नृणाम्॥** (र०पु० खण्ड 3, अध्याय 25, श्लोक 47 एवं खण्ड चार अ० 35 श्लोक-57)

गीता में भी आया है कि अर्जुन ने युद्ध क्षेत्र में खड़े पितरों और पितामहों को देखा। अ० 1/36 आगे चलकर अर्जुन ने कहा कि (मैं युद्ध लड़ने को खड़े हुए) आचार्य पितर, पुत्र, पितामह, मातुल, श्वसुर, पौत्र आदि को मारना नहीं चाहता। गीता अ० 1, श्लोक 34,35 से स्पष्ट है कि युद्ध क्षेत्र में लड़ने को खड़े हुए ये सब जीवित व्यक्ति (पितरादि) ही थे। ये मृत पितर नहीं थे। सैकड़ों प्रमाण दिये जा सकते हैं, जिससे यह सिद्ध होता है कि शास्त्रों में जीवितों को ही पितर संज्ञा दी गई है। परन्तु मृतक शरीर को दबाना या जलाना लोग पुण्य समझते हैं। आत्मा को तो सभी लोग अविनाशी मानते हैं। सभी अपना कर्मफल भोगने के लिए संसार क्षेत्र में आते हैं। जो जैसा करेगा वैसा पायेगा। किये हुए कर्म का फल निश्चित रूप से भोगना पड़ता है। जैसे—**'अवश्यमेव भोक्तव्यमृकृतं कर्म शुभाशुभम्'**। पितर संज्ञक किनको? पितर शब्द शब्द का बहुवचनान्त रूप है। अत: **'पान्ति रक्षन्तीति पितरः।'** इस व्युत्पत्यनुसार वे सभी पितर हुए, जो हमारी किसी भी प्रकार से रक्षा करने में समर्थ हैं। पितृपक्ष में पिता, पितामह, प्रपितामह, माता, मातामही, प्रपितामही इन तीनों पीढ़ी के पितरों का ही श्राद्ध विधान है। क्योंकि इनसे ही पितर हमें धर्मोपदेश देकर अधर्माचरण से अथवा धनादि द्वारा भौतिक कष्टों से बचा सकते हैं। इससे अग्रिम पितरों का जीवित रह पाना प्राय: सम्भव नहीं है। पितर, यह मृत वंशजों की कोई रूढि संज्ञा नहीं जैसा कि आजकल समझा जाता है। बल्कि पुत्र ही आगे चलकर (यौवनावस्था के पश्चात्) पितर कहलाते हैं। इस विषय में **'पुत्रासो यत्र पितरो भवन्ति'** यजु० 25.22 का यह मन्त्रांश प्रमाण रूपेण द्रष्टव्य है।

स्वर्गस्थ वंशज तो इसी रूप में पितर कहे जा सकते हैं। वे हमारे पितर थे। वेदों के अनेकश: मन्त्रों में **'ते आगमन्तु ते इह श्रुवन्त तेऽवन्त्वस्मान्।'** (यजु० 1957) **पितरः शुन्धध्वम्।** यजु० 19.33 पितर इस यज्ञिय वर्रि पर बैठे, हमें उपदेश दें, हमारी रक्षा करे, भोजनापरान्त हाथ

धोए आदि-आदि प्रार्थनायें की गई हैं, ये सब जीवित पितर ही कर सकते हैं। अत: जीवितों का ही श्राद्ध किया जाए न कि मरे हुए का। यही वैदिक परम्परा है। सम्भवत: सभी ये हमारे वृद्ध पितर जो पदार्थजो आसानी से खा सकते हैं। जैसे—खीर, पूड़ी, भात, मक्खन आदि कोमल पदार्थ देने की परम्परा आज भी चल रही है।

श्राद्ध क्या है ? आइये इस पर विचार करें। 'श्रत' सत्य का नाम है एवं **श्रात्सत्यं दद्यादि यथा क्रियथ सा श्रद्धा। श्रद्धया यत क्रियते तत् 'श्राद्धम्'**। अर्थात् जिस क्रिया से सत्य का ग्रहण किया जाय उसको और जो श्रद्धा से कर्म किया जाए उसका नाम श्राद्ध है। जैसा कि मैंने पहले बताया कि पितर का अर्थ रक्षा करने वाला, रक्षा जीवित कर सकता है, मृतक नहीं। **'तृप्यन्ति तर्पयन्ति येन पितृन् तत्तर्पम्'**। जिस कर्म से विद्वान् माता-पिता प्रसन्न हो और वृद्ध और ज्ञानियों की सेवा एवं सत्कार को ही कहते हैं, परन्तु सेवा-सत्कार जीवित का होता है, मृतक का नहीं। वेद, शास्त्र, उपनिषद्, गीता, महाभारतादि सभी धर्म ग्रन्थों में पुनर्जन्म के अनेक प्रमाण हैं और इससे सम्बन्धित कई सत्य घटनाएं भी प्रकाश में आ चुकी हैं। गीता अ० 2 श्लोक 22 में लिखा है कि जिस प्रकार मनुष्य वस्त्रों को छोड़कर नए वस्त्र धारण करता है, उसी प्रकार मनुष्य यह जीवात्मा पुराने शरीर को छोड़कर दूसरे नए शरीर को धारण करता है। इसी प्रकार महाभारत वनपर्व अध्याय 183 में आया है कि आयु पूरी होने पर स्थूल शरीर का त्याग करके उसी क्षण किसी दूसरी योनि (शरीर) में प्रकट होती है। अस्तु! जीव एक शरीर का त्याग करके दूसरे शरीर में प्रविष्ट हो जाता है। तो फिर मृत माता-पितादि पितृपक्ष में भोजन करने कैसे आ सकते है ? यदि कहिये कि आते हैं तो पितृपक्ष में लाखों घरों में लोगों को मरना चाहिए। क्योंकि जब तक नए शरीर और घर को छोड़ेंगे नहीं, तब तक पुराने घर में जेवनें कैसे आयेंगे ? दूसरी योनि में रहकर भी पूर्वजन्म के माता-पितादि को भोजन नहीं पहुँच सकता। क्योंकि एक तो यह पता नहीं रहता है कि किसके माता-पिता कहाँ जन्म लिए हैं और दूसरे का एक का खाया हुआ एक के पेट में कैसे जाता। अत: उनके (माता-पितादि) निमित्त ब्राह्मणों को और कौओं को खिलाने से उन्हें भोजन कदापि नहीं पहुँच सकता। विश्व में जितने महापुरुष हुए उनमें से अद्वितीय समाज-सुधारक महर्षि दयानन्द सरस्वती एक थे। उनके विचार आज भी प्रासंगिक एवं ग्राह्य हैं। वर्तमान समाज में ढोंग, पाखण्ड, अन्धविश्वास एवं रूढ़िवादी परम्पराएं चतुर्दिक छाई हुई हैं। आर्यसमाज के प्रवर्तक महर्षि दयानन्द सरस्वती ने समाज में व्याप्त सतीप्रथा, दहेज, बालविवाह, मूर्तिपूजा, श्राद्ध, पिण्डदान एवं तर्पण आदि जैसी कुप्रथाओं के प्रतिकूल अपना एक द्वितीय आन्दोलन छेड़ा था। आइए विचारिए तथा **'सत्यमेव जयते नानृतम्'** के उद्घोष को उजागर करिये सत्य के ग्रहण करने और असत्य के छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिए। यही आर्यसमाज के नियम-4 हैं। (साभार—टंकारा समाचार)

श्री विनोद कुमार जी का निधन

आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा के पूर्व मन्त्री एवं आचार्य प्रिंटिंग प्रेस दयानन्दमठ रोहतक के मालिक स्वर्गीय आचार्य देवव्रत शास्त्री जी के ज्येष्ठ सुपुत्र श्री विनोद कुमार जी का 11 सितम्बर 2024 को हृदयगति रुक जाने से निधन हो गया। श्री विनोद कुमार एक सात्त्विक, सौम्य एवं मिलनसार व्यक्तित्व के धनी थे। सभी से मधुर मुस्कान के साथ मिलते थे। आर्य परिवार के लिए यह अपूरणीय क्षति है। उनके निमित्त शान्ति-यज्ञ का आयोजन दिनांक 15 सितम्बर 2024 को किया गया जिसमें आर्यसमाज के अनेक साधु-संन्यासी, विद्वान् एवं कार्यकर्त्ता तथा अन्य सामाजिक संस्थाओं के लोगों ने उन्हें श्रद्धांजलि अर्पित की।

श्री विनोद कुमार जी के आकस्मिक निधन पर आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा दयानन्दमठ रोहतक हार्दिक शोक प्रकट करती है तथा दिवंगत आत्मा की सद्गति के लिए परमपिता परमात्मा से प्रार्थना करती है कि प्रभु उनको अपने चरणों में स्थान दे तथा परिवार को इस दु:ख को सहन करने की शक्ति प्रदान करे।

—सत्यवान आर्य, कार्यालयाधीक्षक

दुःख और सुख

दुःख मनुष्य की एक नकारात्मक मानसिक स्थिति है। दुःख की स्थितियों का निर्माण व्यक्ति स्वयं करता है और फिर उसे मिटा भी देता है। दरअसल दुःख का निर्माण हम स्वयं दूसरों के कारण करते हैं। ऐसा देखने में आया है कि अपने कारण कोई भी व्यक्ति न तो दुःखी होता है और न सुखी होता है। दुःख तो मनुष्य को हमेशा ही दूसरे के कारण सताता है। इसी प्रकार हम सुख भी दूसरे के कारण ही अनुभव करते हैं। दुःख और सुख को जब हम स्वयं लेने को तैयार बैठे होते हैं, तभी वे हमारे पास आते हैं। उदाहरण के लिए जिस प्रकार हमें कोई मिठाई देता है और हमें उसकी आवश्यकता नहीं होती तो हम उसे लौटा देते हैं उसी प्रकार कोई हमें दुःख देना चाहे और हम दुःख लेने के लिए राजी न हो तो वह स्वयं लौट जाता है और देने वाले को ही सताने लगता है। हालांकि हम में से अधिकांश लोग पहले से ही दुःख को स्वीकार करने के लिए खड़े रहते हैं। कभी-कभी तो ऐसा भी होता है कि कोई दुःख देने वाला नहीं आता तो हम स्वयं ही उसे बुलाकर ले आते हैं। इसकी वजह यह है कि दूसरे की प्रत्येक वस्तु हमें अच्छी लगती है, चाहे वह अच्छी हो या न हो। यह मानव स्वभाव है कि उसे दूसरे का सब कुछ अच्छा लगता है। यही उसके दुःख का कारण बन जाता है। गाँव हो या शहर वहाँ न तो किसी को फुर्सत है कि आपको दुःख दे या सुख दे। आप तो स्वयं हाथ पसारे सड़कों पर घूम रहे हैं कि कोई धक्का मारे और हम दुःखी हो जायें।

आज तक दुनिया में ऐसा कोई व्यक्ति पैदा नहीं हुआ जो किसी को दुःख दे सके। देना तो तभी संभव है जब लेने वाला राजी हो। जो लेने के लिए राजी न हो उसे कोई चीज कैसे दी जा सकती है। गीता में भगवान् श्रीकृष्ण ने अर्जुन कहा भी है कि हे अर्जुन! तुम दुःख और सुख, अपने और पराये की बात छोड़ो और निर्विकार भाव से कर्म में प्रवृत्त हो जाओ। किसी को सुख या दुःख देने वाला कोई नहीं है। स्व-कर्म (अपने कर्म) से ही मनुष्य सुख या दुःख पाता है और फिर बेहाल होकर त्राहि-त्राहि करने लगता है। ऐसी स्थिति में मनुष्य को विचलित नहीं होना चाहिए। उसे अपने अन्तर्मन की पुकार को सुनना चाहिए। अन्तर्मन में विभिन्न शक्तियों का भण्डार निहित है। जब आप ध्यान की गहराइयों में डूबते हैं तब आपको पता चलता है कि अन्तर्मन में ऊर्जा का भण्डार निहित है। इस ऊर्जा का सदुपयोग करें। स्वयं को ऊर्जावान् महसूस करें। फिर देखें कि आप जो भी कार्य करेंगे, उसमें आनन्द मिलेगा।

—आचार्य सुदर्शन

गायत्री महामन्त्र से प्रार्थना व कर्त्तव्य

ओम् भूर्भुवः स्वः तत् सवितुर् वरेण्यम् भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात्।

(ऋ० 3.62.10, यजुर्वेद 36.3, सामवेद 6.3.10)

1. **ओम् भूर्भुवः स्वः**—हे ईश्वर! आप सर्वरक्षक, प्राणदायक, दुःखनाशक और सुखदायक हैं।
2. **तत् सवितुर् वरेण्यम्**—आप समस्त जगत् के उत्पादक और वरण करने योग्य हैं।
3. **भर्गो देवस्य धीमहि**—आप शुद्ध स्वरूप परमात्मा का हम ध्यान करते हैं।
4. **धियो यो नः प्रचोदयात्**—आप हमारी बुद्धि को सन्मार्ग में प्रेरित करें।
5. **ओम् असतो मा सद्गमय।** (शतपथ ब्राह्मण) हे ईश्वर! मुझे असत्य से सत्य की ओर ले चलिये।
6. **ओम् तमसो मा ज्योतिर्गमय।** (शतपथ ब्राह्मण) हे ईश्वर! मुझे अविद्या से विद्या की ओर ले चलिये।
7. **ओम् मृत्योर्मा अमृतं गमय।** (शतपथ ब्राह्मण) हे ईश्वर! मुझे मृत्यु से अमृत की ओर ले चलिये।
8. **ओ३म् आनन्दः**—हे ईश्वर! आप आनन्दस्वरूप हैं मुझे भी आनन्द दीजिये।
9. **सत्यं वद।** (तैत्तिरीय उपनिषद्, शिक्षा वल्ली)—सत्य बोलो।
10. **धर्मं चर।** (तैत्तिरीय उपनिषद्, शिक्षा वल्ली)—धर्म का आचरण करो।
11. **वेदं पठ।** वेद पढ़ो।
12. **यजस्व वीर।** (ऋ० 2.26.2)—हे वीर! यज्ञ करो।

निष्कर्ष-ऊपर दिये गये मंत्र व उनके अर्थ को स्मरण कर प्रतिदिन प्रातः सायं गायत्री आदि मन्त्रों का जप करो और वैदिक, धार्मिक, याज्ञिक बनो।

संकलयिता—स्वामी शान्तानन्द सरस्वती,
दर्शन योग महाविद्यालय, सुन्दरपुर (रोहतक)

छोटा विज्ञापन बड़ा लाभ

'आर्य प्रतिनिधि' पाक्षिक समाचार पत्र में विज्ञापन देकर लाभ उठायें।

यज्ञ हेतु दान देकर पुण्य के भागी बनें

आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा में प्रतिदिन दोनों समय यज्ञ किया जाता है और पर्यावरण शुद्धि के लिए रोहतक जिले के सरकारी, गैर सरकारी विद्यालयों और गांव-गांव में यज्ञ व वेद प्रचार का आयोजन किया जाता है। इस महायज्ञ में आप लोग अपने बच्चों के जन्मदिन, विवाह वर्षगांठ व अन्य उपलक्ष्यों पर दान देकर पुण्य के भागी बनें। संस्था सदैव आपकी आभारी रहेगी।

यज्ञदान हेतु बैंक खाता

ACCOUNT NAME - ARYA PRATINIDHI SABHA HARYANA
BANK NAME - PNB JHAJJAR ROAD ROHTAK
Account No. - 0406000100426205
IFSC - PUNB0040600
MICR - 124024002

प्रेषक :
मन्त्री
आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा
दयानन्द मठ, रोहतक
हरियाणा, 124001

श्री .....

पता .....

.....

आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा (रजि.) के स्वामित्व में मुद्रक, प्रकाशक उमेद शर्मा ने दुर्गेश्वरी प्रिंटर्स के लिए आचार्य प्रिंटिंग प्रेस, रोहतक से मुद्रित एवं कार्यालय, सिद्धान्ती भवन, दयानन्दमठ रोहतक-124001 से प्रकाशित।

- सम्पादक उमेद शर्मा